Chapter - 5

पंचम अध्याय

"विशेष नारी पात्र"

अध्याय – 5

विशेष नारी पात्र

भारतीय समाज पुरुष प्रधान व ब्राह्मणवादी प्रकृति का समाज है। हमारे देश की स्त्रियाँ इक्कीसवीं सदी में पुरुष के समान सम्मान एवं अधिकार पाने के लिए संघर्ष कर रही हैं। उसी स्थिति में दलित वर्ग की महिलाओं की सामाजिक शैक्षिक और आर्थिक स्थिति सवर्ण महिलाओं की अपेक्षा अधिक पिछड़ी, दयनीय और कमजोर है। सदियों से स्त्रियों पर धर्म के नाम पर अनगिनत अत्याचार होते चले आए हैं। दलित स्त्री तो शोषितों में भी शोषित है। स्वतंत्रता और समानता के अधिकार से तो उसे सदा से ही वंचित रखा गया है। महिला चाहे संभ्रात वर्ग की हो या निर्धन वर्ग की, महिलाएँ दलित ही हैं जब तक महिलाएँ पुरुष की दृष्टि में औरत है, तब तक कन्या से औरत होने तक के सफर में आए प्रत्येक पड़ाव जैसे–शिक्षा, बाल–विवाह, गरीबी, दुश्चरित्रता, श्रमिक–समस्या, अप्राकृतिक यौन–शोषण, वधुओं को जलाने वाली आधुनिक संस्कृति, बलात्कार से उत्पन्न बच्चे का अधिकार, लिंग परीक्षण, अशिक्षा और अन्याय शोषणों के विरुद्ध लेख़नी, आवाज़ नहीं उठाई जाएगी तब तक हमारे समाज में जागृति नहीं आ पाएगी। जब तक महिलाओं को समान अधिकार नहीं मिलते तब तक महिलाएँ दूसरे दर्जे की नागरिक ही बनी रहेंगी। अपने अधिकारों के प्रति सकारात्मक जन–जागरण का बीड़ा स्वयं महिलाओं को उठाना पड़ेगा। सदियों से महिलाओं को दासता के बंधनों में जकड़कर रखा गया है, ताकि वे किसी भी वय में स्वतंत्र न हो सकें। स्त्री के मानवीय अधिकार को धर्म के नाम पर छीना गया था। 'मनु' स्त्री को किसी भी अवस्था में स्वतंत्रता देने के पक्ष में नहीं थे। महात्मा ज्योतिबा फुले और उनकी पत्नी सावित्री फुले ने नारी–शिक्षा पर अत्यधिक जोर दिया। खास तौर पर स्त्री और शुद्रों की शिक्षा के लिए उन्होंने अपना पहला कदम उठाया। बाद में डॉ. अम्बेडकर ने नारी को संवैधानिक–सामाजिक समता एवं स्वतंत्रता का अधिकार दिया। राघवजी ने अपने विचार दलित नारी के विषय में इस प्रकार प्रस्तुत किए हैं–

> **"अभी तक दलित पात्रों में सबसे अधिक दयनीय दशा हो तो वह स्त्री पात्रों की है। दलित कहाँनी की स्त्री स्वपुरुष और पर पुरुष दोनों से सुरक्षित नहीं। अब की स्त्रियाँ शिक्षित होने लगी हैंद्व तर्कबद्व बहस करने लगी हैं। तब असहाय और लाचार स्त्रियों का चित्रण कितना योग्य है ? अब की कहानी की दलित स्त्री स्वाभिमान और आत्मनिर्भर होनी चाहिए, ऐसे मेरा मानना है। ....अबला नहीं वह सबला है ऐसा चित्र खड़ा होना चाहिए। ऐसा बिल्कुल ज़रुरी नहीं कि दलित कहानी के पात्रों के साथ अन्याय ही हो, अन्याय आर्थिक अथवा सामाजिक ही हो !.......... ।"**[1]

जैसे–जैसे दलित नारियों में शैक्षणिक आलोक फैला बौद्धिक चेतना जागी वैसे–वैसे आज़ादी के बाद अनेकों स्त्री एवं कथाकारों ने नारी एवं दलित नारियों के उत्पीड़न के विरुद्ध जमकर कलम चलाई। अंधविश्वास, पाखंड, धार्मिक रुढ़िवादिता के बंधन से मुक्ति दिलाकर नारी अस्मिता के प्रश्न को उठाया। परिस्थिति में परिवर्तन आया और सदियों से चार दीवारों में बंद नारी में आत्मविश्वास जागा और वह अपनी अस्मिता अपने मौलिक अधिकारों की प्राप्ति के लिए घर से बाहर निकलने का साहस कर पायीं।

जहाँ तक दलित नारी के जीवन, दीनचर्या, समस्या, उत्पीड़न, शोषण, गरीबी पर दृष्टि डालें, तो दलित नारी को सबसे पहले उनकी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए ही संघर्ष करना पड़ता है। शिक्षा, समानता, अधिकार, स्वतंत्रता, अस्मिता जैसे प्रश्नों के समाधान के लिए तो उसे मात्र सवर्णों से ही नहीं अपने ही दलित समाज यहाँ तक की अपने ही परिवार के लोगों से भी संघर्ष करना पड़ता है। फिर भी आज की दलित नारी सभी अवरोधों को परे ढ़केलते हुए अपने आत्मसम्मान की रक्षा के लिए किसी भी तरह का समझौता नहीं करना चाहती। यह बात भी उतनी ही सत्य है कि सभी दलित नारी आज सज़ग, जागरुक, शिक्षित और स्वतंत्र नहीं हो पायी है, किन्तु बात यहाँ शिक्षित और अशिक्षित दलित नारियों की नहीं बल्कि उन दलित नारियों की है, जो शोषित होकर भी न्याय के लिए आवाज़ नहीं उठाती है या शोषण के खिलाफ आवाज़ बुलंद करने में भी हिचकिचाती नहीं है। दलित नारियों के विविध रुपों को हिन्दी और गुजराती की दलित कहानियों में हम देख चुके हैं। यहाँ पर बात विशेष नारी पात्रों की हो रही है। दलित नारियों में भी कुछ पात्र हमारे समक्ष ऐसे आए हैं, जो शोषण को सहते हुए उसके आदी बन चुके हैं और उसे ही अपना भाग्य समझकर स्वीकार लेते हैं। जबकि कुछ नारी पात्र ऐसे भी हैं, जो अपने पर या दूसरों पर अत्याचार होते देखकर खामोश, लाचार या बुत बनकर नहीं बैठे रहते, जूल्म और अन्याय के समक्ष प्रतिकार करते हैं, चाहें उका जो भी परिणाम हो, किन्तु उसका 'निडरता से सामना करते हैं। दलित नारियों पर होने वाले परंपरागत अत्याचारों को कौन नहीं जानता ? हिन्दी और गुजराती की दलित कहानियों के ऐसे नारी पात्र मेरी दृष्टि में विशेष नारी पात्र होने का स्थान प्राप्त करते हैं, जिन्होंने लीक से हटकर अपने लिए, अपने परिवार एवं समाज के लिए अन्याय के समक्ष आवाज़ उठाई है। जो नारी आज की अन्य दलित नारियों के लिए एक आदर्श बन सकती हैं या फिर जिन नारी पात्रों ने पाठकों के मन–मस्तिष्क पर अपनी छाप छोड़ी है।

हिन्दी की दलित कहानियों में 'क्रांति' (राजवाल्मीकि) की नायिका 'क्रांति', 'साज़िश' (सूरजपाल चौहान) की 'शांता', 'सिलिया' (सुशीला टाकभौर), 'रंपो का चेहेरा' (उमेश कुमार सिंह), की रंपो, 'सुनीता' (रजतरानी 'मीनू') की सुनीता, 'मंगली' (कुसुम मेघवाल), 'नई धार' (अनीता भारती), 'अम्मा' (ओमप्रकाश वाल्मीकि) की अम्मा, 'अंगूरी' (सूरजपाल चौहान) की अंगूरी।

1. हिन्दी की दलित कहानियों में विशेष नारी पात्र

1. सुशीला टाकभौरे की कहानी **'सिलिया'** की नायिका सिलिया दलित शिक्षित युवती है। वह सवर्णों द्वारा किए जाने वाले छुआछूत, भेदभाव के विषय में गंभीरता से विचार करती है। सवर्णों के समान सम्मान, इज्जत और बराबरी का दर्जा पाने के लिए वह 'झाडू' को अपने समाज के लिए दुष्चक समझती है। अपमानजनक गुलामी के चिह्न को छोड़कर वह हाथ में 'कलम' थाम लेती है। अपना भाग्य एवं अपने समाज का भाग्य स्वयं अपनी कलम से बदलने का दृढ़ निश्चय करके बीस वर्ष बाद वह उस स्थान पर पहुँचती है, जहाँ भरी सभा में विशाल जनसमूह के बीच उसको सम्मानित किया जाता है। यहाँ पर दलितों के हाथ में झाडू थमाने के विषय में सिलिया के यह विचार है कि–

"इस समाज में पैदा होना नहीं होना तो हमारे हाथ में नहीं था, परंतु इस अपमाजनक गुलामी के चिह्न को छोड़ना तो हमारे हाथ में है। यह हम अवश्य कर सकते हैं...... ।"[2]

सिलिया के यही विचार उसे विशेष बनाते हैं। सिलिया मात्र अपनी ही प्रगति नहीं चाहती, बल्कि वह एक ऐसा मार्ग बनाना चाहती है, जिस पर चलकर दलितों को सम्मानजनक जीवन जीने का अधिकार मिले। उसे अपने लक्ष्य की प्राप्ति भी होती है। सिलिया दलित युवतियों के लिए एक आदर्श नारी पात्र है, जो यह सिद्ध करती है कि व्यक्ति जन्म से नहीं कर्म से महान बन सकता है, क्योंकि जन्म व्यक्ति की शक्ति से परे है, परंतु कर्म व्यक्ति के वश में है।

सिलिया सवर्णों की दोगली मानसिकता से भलीभाँति परिचित है। तभी तो सवर्ण नेता सेठी द्वारा दिये गये "शुद्र वधू चाहिए" जैसे सुनहरे विज्ञापन की आड़ में छिपे पाखंड को वह बखूबी समझ लेती है। सवर्णों की लड़ाई में ढाल बन जाना उसे पसंद नहीं। अपने आत्मसम्मान के प्रति वह इतनी सजग है कि किसी भी सूरत में उसे गँवाना नहीं चाहती। उसके शब्दों में –

"हम क्या इतने लाचार हैं, आत्मसम्मान रहित हैं, हमारा अपना भी तो कुछ अहंमभाव है। उन्हें हमारी ज़रुरत है, हमको उनकी ज़रुरत नहीं। हम उनके भरोसे क्यों रहे ? अपना सम्मान हम खुद बढ़ाएंगे।"[3]

अपनी अस्मिता की कीमत पर उसे "दिखावे की चार दिन की इज्जत" नहीं चाहिए। इतना मात्र ही नहीं, सिलिया संकल्प भी करती है वह पढ़ेगी, पढ़ती ही रहेगी, शिक्षा के साथ अपने व्यक्तित्व को भी समृध्द बनाती रहेगी। साथ ही साथ, उन सभी परंपराओं के कारणों का पता लगाऐगी जिन्होंने उन्हें अछूत बना दिया है। इस संदर्भ में भारती गोरे का कथन है–

"प्रेमचंद की सिलिया (संदर्भः गोदान) से लेकर सुशीला टाकभोरे की सिलिया तक दलित स्त्री का संघर्ष कठोर रहा है। अन्याय को सहने से लेकर अन्याय के कारणों का पता लगाकर उन्हें मिटाने के संकल्प तक की उसकी मानसिकता उसके बदले हुए तेवर का संकेत देती हैं। अब दलित स्त्री को अपनी मुक्ति का मार्ग मिल चुका है और वह उस मार्ग पर अग्रसर भी हो चुकी है।"[4]

गरीबी, अशिक्षा दलितों की चेतना को सुलाये रखती है, जबकि शिक्षा प्राप्त कर सिलिया जैसी दलित युवती में जब चेतना जागृत होती है, तब उसकी माँ यहाँ तक की उसकी नानी भी सिलिया के विचारों से सहमती जताती हैं। यहाँ तीन पीढी की दलित स्त्रियों में आई दलित चेतना को कहानीकार ने बखूबी चित्रित किया है।

<u>2.</u> 'मंगली' डॉ. कुसुम मेघवाल की कहानी की नायिका मंगली एक गरीब, अशिक्षित आदिवासी मजदूरिन है। उसका पति गरीबी के कारण एवं दवाईयों के अभाव में मर चुका है। मंगली पति की मृत्यु का शोक घर पर बैठकर नहीं मना सकती। आदिवासियों की सबसे बड़ी चुनौती है, उनकी बेरोज़गारी। ठेकेदारों की चंगुल में फँसे आदिवासी गाँव छोड़कर शहरों में जाते हैं। तो वहाँ भी सिवाय बीमारी–मौत के अलावा

कुछ नहीं पाते। मंगली पति की मृत्यु के बाद अकेले परिश्रम करके जीवन जीने का निर्णय लेती है। ठेकेदार उसे आश्रय देकर, धन, वस्तुओं का लोभ देकर अपनी वासनापूर्ति करना चाहता है, किन्तु मंगली के अंदर छिपी नारी शक्ति का ज्ञान उसे नहीं था। वह तो मंगली को बेचारी, अबला, गरीब और मजबूर समझकर उसे पाना सरल समझता था। मंगली उसकी वासनावृत्ति को जानकर उसे चेतावनी देते हुए कहती है–

> **"ठेकेदार साहब मुझे पता नहीं था कि आपके अंदर एक शैतान छिपा है और आप मुसीबत में मेरी मदद करने के बहाने अपना उल्लू सीधा करने के लिए मुझे यहाँ लाए हैं। किंतु मैं भी साफ कहे देती हूँ कि मैं भी एक भीलनी की जाई हूँ जो जंगल में लकड़ियाँ काटते हुए भी बच्चे को जन्म दे देती है और अपना नाल स्वयं काटकर बच्चे को गोद में उठाकर घर चली आती है। इसलिए अब और आगे बढ़ने की कोशिश मत करना वरना बकरे–सा काट के रख दूँगी।"**[5]

मंगली जब चूल्हे की लकड़ी से उस पर वार करती है, तो ठेकेदार बेसुध हो जाता है।

मंगली इन्हीं विशेष गुणों के कारण एक आदर्श आदिवासी स्त्री के रुप में हमारे समक्ष आती है। गरीबी एवं परिस्थितिवश मंगली ठेकेदार के समक्ष आत्मसमर्पण कर देती तो, इस कहानी में कोई विशेष बात नहीं होती। आत्मसम्मान एवं आत्मरक्षा के गुण हर नारी में होना अति आवश्यक है। नारी चेतना एवं दलित चेतना की बात मंगली के चरित्र में देखी जा सकती है। ठेकेदार के खिलाफ पुलिस थाने पहुँचकर रिपोर्ट दर्ज करवाकर उसे गिरफ्तार करवाना मंगली जैसे साधारण पात्र को असाधारण बना देती है। क्योंकि सामान्य दलित महिला इतना साहस ही नहीं बटोर पाती, कि बिना किसी की सहायता के अकेले ही अपने दोषी को दंड दिलवा सके। दलित नारी में वर्तमान समय में आने वाली जागृतता मंगली जैसे पात्रों द्वारा दिखाकर कहानीकार ने आधुनिक युग में दलित नारी में आने वाली चेतना को हमारे समक्ष साकार रुप में उपस्थित कर दिया है। मंगली का पात्र पाठकों की स्मृति में सदा बना रहेगा।

<u>3.</u> **'सुनीता'** रजत रानी 'मीनू' द्वारा रचित कहानी की नायिका सुनीता दुहरे शोषण को झेलती है। एक तो इसलिए की वह स्त्री है, दूसरे इसलिए क्योंकि वह दलित स्त्री है। दलित महिलाओं की त्रासदी यह है कि उन्हें एक गाल पर ब्राह्मवाद का तो दूसरे गाल पर पितृसत्ता का थप्पड़ खाना पडता है। उपेक्षापूर्ण व्यवहार का अहसास असह्य होता है। सुनीता से अधिक महत्त्व उसके छोटे भाई को दिया जाता है। यहाँ तक कि उसकी पढाई को भी अधिक ज़रुरी एवं महत्त्वपूर्व नहीं समझा जाता। जिस समाज की सुनीता थी, वहाँ पुत्र को ही वंश बढ़ाने के लिए विशेष महत्त्व दिया जाता था। ऐसे समाज में चारों ओर केवल पुरुषों का बोल बाला था। सुनीता के लिए सवर्ण भी ताने मारते हुए कहते–

> **"चमारी पढ़ लिखकर अफसर बनेगी। गाँव में बड़ी जाति के लोग तो लड़कियों को पढ़ाना जरुरी नहीं समझते पर छेदा चमार को अपनी औकात का शायद पता नहीं है।"**[6]

सुनीता के माता–पिता बेटे–बेटी में भेद–भाव रखते हैं एंव पुत्र की शिक्षा एवं देखभाल के लिए पुत्री की शिक्षा को हमेशा गौण समझते हैं। अपने ही माता–पिता द्वारा किऐ जाने

वाली अवहेलना सुनीता के लिए असहनीय थी, किन्तु सुनीता उन युवतियों में से नहीं थी, जो मुसीबतों के समक्ष कमजोर पड़ जाए। माता–पिता का कठोर व्यवहार होने पर भी विवाह के प्रस्ताव के समक्ष वह निडरता से इन्कार करने का साहस करती है और आगे पढ़ने की इच्छा जताती है। वह पढ़–लिख कर शिक्षिका बनती है, किन्तु उसका लक्ष्य आई.ए.एस. या आई.पी.एस. की परीक्षा उत्तीर्ण करना रहता है। लेखिका के शब्दों में–

> **"उसे अपने वर्ग की चिंता सदैव सताती रहती थी सुनीता स्वयंसेवी मंचों पर जोरदार भाषण दिया करती थी और भाषणों में वह हमेशा स्त्री एवं दलित वर्ग की उपेक्षा के कारणों का खुलासा करती और निवारणों पर जोर देती थी।"**[7]

सुनीता मात्र स्वयं के सुख–चैन के लिए नहीं जीना चाहती, वह अपने दलित समाज के पुरुषों एवं स्त्रियों में चेतना लाना चाहती है। सुनीता दलित बच्चों को ट्यूशन पढ़ाती ताकि आगे की पढ़ाई में आर्थिक मदद उसे मिलती। उसे सदैव दलित वर्ग के कल्याण की चिंता रहती। मन ही मन वह चिंतन किया करती। वह दलित का उत्थान करना चाहती थी। साथ ही अपने भाषणों में वह हरिजन शब्द को दलितों के लिए गाली बताती थी। सुनीता को अपने कैरियर की चिंता थी, किन्तु कलक्टर बनने के अपने सपने को वह भूल कर समाज के हितार्थ वह राजनीति में प्रवेश करती है और जीत भी प्राप्त करती है। वह अपने पिता एवं सवर्ण समाज के उन लोगों के समक्ष यह सिद्ध करके दिखा देती है, कि बेटे से भी अधिक एक बेटी अपने माता–पिता का नाम एवं कुल को रोशन करने की क्षमता रखती है। दलित ही नहीं सुनीता सवर्ण समाज के लिए एक मिसाल बन जाती है।

यहाँ सुनीता का संकल्प, उसकी इच्छाशक्ति अपनी शक्ति का परिचय देने के उसके हठ एवं संघर्ष की आग में तपकर वह स्वर्ण की तरह चमकने लगती है। सुनीता में दलित चेतना एवं नारी चेतना दोनों समान रुप में दिखाई देते हैं। सुनीता अपने परिवार, समाज एवं सवर्ण समाज में नारी शक्ति की अमिट छाप छोड़ती है।

4. सूरजपाल चौहान की **'साजिश'** कहानी में नायिका शान्ता ने भले ही उच्च शिक्षा प्राप्त नहीं की थी, किन्तु वह अपने पढ़े–लिखे पति नथ्थू से अधिक बुद्धिशाली, स्पष्टवक्ता एवं दूरदर्शी थी। नत्थू बैंक मैनेजर के पिगरी लोन दिलवाने के मश्वरे के षड़यंत्र को नहीं समझ पाता, जबकि शांता समझ जाती है, कि मैनेजर जैसे सवर्ण लोग आज भी दलितों को उनके परंपरागत कार्य में ही लगाए रखना चाहते हैं, ताकि दलितों में जागृति, समानता का अधिकार, सम्मानपूर्ण जीवन जीने का अवसर उन्हें न मिल सके। दलित मात्र झाड़ू लगाएँ, सफाई कार्य करें ताकि वे हमेशा निष्क्रिय ही रहें। शांता के नेतृत्व में एक विशाल जन–समूह बैंक की ओर चल देता है। एक साधारण सी दलित स्त्री शांता जिला प्रशासन, मैनेजर, पुलिस आदि सवर्ण लोगों को हिलाकर रख देती है। शांता अपने अधिकारों एवं सरकार की दी जाने वाली लोन की सहायता को सरलता से न मिलने पर उसे छीनना भी जानती है। दलितों में शिक्षा से चेतना आई है, परिणामस्वरुप दलित लोग परंपरागत पेशों–कार्यों से विमुख हुए हैं तथा सम्मानजनक माने–समझे जाने वाले दूसरे कार्यों को अपनाने के प्रति सचेत एवं सक्रिय हुए हैं। शान्ता के विषय में कथन है कि–

"यह तो नायक की पत्नी का साहस और जुझारुपन है कि वह पति द्वारा मानसिक रुप से सुअर–फार्म के लिए ऋण लेने को तैयार हो जाने के बावजूद टेंम्पो के लिए ही ऋण लेने पर अड़ जाती है और बैंक मैनेजर को टैम्पो खरीदने के लिए ऋण देना पड़ता है।"[8]

आज शांता जैसी सजगता एवं साहस अन्य दलित स्त्रियों में बहुत कम देखने को मिलता है। बैंक मैनेजर को शांता ऐसा सबक सीखाती है, ताकि वह अपने अधिकार एवं पद का दुरुपयोग जीवन पर्यंत कभी नहीं करेगा। आज के दलित पुरुषों के साथ दलित स्त्रियों के लिए भी यह ज़रुरी है, कि वे शांता की तरह अपने अधिकारों के प्रति सदैव सजग रहें एवं अपनी शक्ति एवं क्षमता को पहचानें। साथ ही अन्याय एवं अत्याचार के खिलाफ आवाज़ उठाने में हिचकिचाएँ नहीं।

5. सूरजपाल चौहान की कहानी **'अंगूरी'** की नायिका अंगूरी अपने पति गेन्दा के साथ गरीबी में जीवन व्यतीत करती है। बेगारी करने वाला गेंदा अपनी रुपवती पत्नी अंगूरी को सवर्णों की कुदृष्टि से बचाने में असमर्थ है। एक कहावत है, **'गरीब की जोरु, सबकी भाभी।'** अंगूरी की भी यही दशा थी। अंगूरी अपने आपको जवान, अधेड़, बूढ़ों से बचाती फिरती थी और हमेशा सजग रहती थी। लेखक ने इस विषय में लिखा है कि–

"अंगूरी इतनी रुपवती थी कि उसकी सुन्दरता व यौवन को देख कर युवक तो युवक गाँव के बड़े–बूढ़ों तक की नज़रें उससे न हटती। उम्र में दुगने लोग उसे 'भाभी' कह कर पुकारते और रंग–बिरंगे व्यंग्य–बाणों से उस पर प्रहार करते। उनके व्यंगों को सुनकर अंगूरी तिलमिला जाती थी। लेकिन करे क्या ? हाय री, दलित नारी की स्थिति !"[9]

गाँव का मुखिया पंडित चन्द्रभान अंगूरी को तरह–तरह का प्रलोभन देकर उसे अपनी वासना का शिकार बनाना चाहता है, किन्तु अंगूरी गरीबी में संपूर्ण जीवन व्यतीत कर सकती थी, लेकिन अपनी मर्यादा का उलंघन नहीं कर सकती थी। एक स्त्री के लिए उसके चरित्र की शुद्धता से बड़ी कोई वस्तु नहीं होती। अंगूरी के लिए भी भेड़ियों की भीड़ में अपने आप को बचाना कठिन था, किन्तु इन भेड़ियों की फितरत को वह पहचानने लगी थी।

अंगूरी के पति को शहर भेजकर मुखिया अंगूरी को अकेली समझकर रात के समय उसके पास आता है, तब अंगूरी शेरनी बनकर उसका सामना करती है। उस पर हँसिये से एवं लातों से ऐसा वार करती है कि मुखिया वहाँ से जान बचाकर भागने पर विवश हो जाता है।

अंगूरी रुपवती होने के साथ–साथ बुद्धिशाली और चतुर भी थी। वह मुखिया के मनसूबों को पहले से ही जानती थी। उसके पति को गाँव से बाहर साजिश के तहत भेजा गया है और उसे जानबूझकर अकेली कर दिया गया। एकांत का लाभ उठाने मुखिया अवश्य आएगा। इसलिए वह अपनी आने वाली समस्या के पूर्व योजना बनाकर उस समस्या का सामना निडरता से करने के लिए सजग हो जाती है।

अभावों के बीच गरीबी में जीवन बसर करना दलित महिला की विवशता है, किंतु गरीबी के कारण अपने चरित्र की पवित्रता को नष्ट न होने देने वाली अंगूरी यह सिद्ध कर देती है कि हर दलित महिला अपनी आर्थिक कमजोरी के कारण अपना शारीरिक शोषण नहीं सहती।

यहाँ अंगूरी अपनी आत्मरक्षा अकेली होने पर भी करती है। आम तौर पर स्त्रियों को पुरुषों के समक्ष अबला कहा जाता है, किन्तु स्त्री यदि निडरता एवं साहसी हो तो वह अंगूरी की तरह किसी पुरुष के समक्ष कमजोर नहीं हो सकती। अंगूरी मुखिया को ऐसा पाठ पढ़ाती है, कि वह कभी गलती से भी किसी दलित महिला की ओर कुदृष्टि डालने का साहस नहीं कर सकेगा। एक दलित अंगूरी न जाने कितनी दलित स्त्रियों को बचा लेती है। यही खासियत अंगूरी जैसे पात्र को विशेष नारी पात्र की कतार में लाकर खड़ा कर देती है।

6. दीपक कुमार 'अज्ञात' द्वारा रचित **'जोजना'** कहानी की सुकिया गाँव की गरीब दलित महिला है। सरकार की योजना के अनुसार दलित बच्चों को सरकारी स्कूल में दाखिला लेने पर हर महीने अनाज मिलता था। सुकिया के साथ गाँव के कई दलित परिवार जोगिन्दर मास्टर के घर–घर जाकर समझाने एवं फायदे की पढ़ाई का लालच देकर स्कूल में अपने स्वार्थवश बच्चों की संख्या बढ़ाते हैं। किन्तु संख्या अधिक हो जाने पर मास्टरजी सरकार से मिलने वाले अनाज को स्वयं ही खा जाते है। धीरे–धीरे गाँव के सभी दलितों को इस अन्याय का पता चलता है। गाँव के गरीब, निःसहाय दलित सब कुछ जानकर भी चुप रहते हैं, कोई जोगिन्दर मास्टर के पास अनाज माँगने या उसे उसके किए गए वादे की याद दिलाने नहीं पहुँचता, किन्तु सुकिया अकेली ही स्कूल जाकर इस अन्याय का विरोध करती है। न्याय न मिलने पर एवं जोगिन्दर मास्टर के अभद्र व्यवहार पर वह उसे झाड़ू से पीटती है। साथ ही सारा अनाज बिखेर देती है। किसी ने कल्पना नहीं की थी कि सुकिया जैसी दलित स्त्री अन्याय का इस प्रकार विरोध कर सकती है। दलितों के सहयोगी नेता का सहयोग लेकर सुकिया अखबार में जोगिन्दर मास्टर के काले कारनामे की पोल खोल देती है।

इस तरह सुकिया गरीब है, किन्तु गरीबी उसे बेबस, लाचार या उसके मनोबल को कमजोर नहीं कर पाती। अन्याय होता देख वह अकेले ही न्याय माँगने चल पड़ती है। अपमान जनक शब्द उसे सहन नहीं होते और वह दोषी को मुहतोड़ जवाब एवं दंड देने में नहीं पीछे हटती। सुकिया जैसे पात्र दलित महिलाओं में ग्रामीण क्षेत्रों में भी आने वाली चेतना एवं जागृति को प्रस्तुत करते हैं। सुकिया अन्य स्त्रियों के सहयोग के बिना ही उनका प्रतिनिधित्व करके न्याय पाने एवं दिलवान का साहस करती है। क्योंकि यदि जुल्म करना गुनाह है, तो जुल्म सहना भी गुनाह है।

7. ओमप्रकाश वाल्मीकि की बहुचर्चित कहानी **'अम्मा'** की अम्मा उन सभी दलित महिलाओं का प्रतिनिधित्व करती हैं जो गली–मुहल्लों में झाड़ू–कनस्तर थामें सुबह–सवेरे दिखाई देती हैं। अम्मा अपना संपूर्ण जीवन लोगों के घरों में जाकर उनकी गंदगी साफ करती हैं, किन्तु इस गंदगी से वह अपने बच्चों एवं बहूओं को हमेशा दूर ही रखती है, ताकि वे लोग इज्ज़त एवं सम्मान से जी सकें। एक सफाई कार्य करने वाली अम्मा के विचार बहुत ही उच्च हैं, वे अपने बच्चों को यही शिक्षा देती हैं, कि जीवन में ऐसा कोई कार्य मत करो जिससे तुम्हें सिर नीचा करना पड़े अर्थात् शरमिंदा होना पड़े। परिश्रम करके जो भी धन मिले उसी में ही अपना जीवन निर्वाह करना चाहिए न कि गलत रास्ते पर चलकर धन कमाना चाहिए।
हरपाल सिंह 'अरुष' के शब्दों में

"अम्मा कहानी की अम्मा का अनेक कष्टों को सहकर संघर्ष और अनभय को अपने उपादान बनाकर अपनी अगली पीढ़ी को गलाजत भरे व्यवरन्याय से मुक्ति दिलाने की आकांक्षा पूर्ण होती दिखाई गयी है। कहा जा सकता है कि ये कहानियाँ शान्त–एकान्त कमरे में काल्पनिक संघर्षो को केन्द्र बनाकर नहीं रची गयी हैं। ये तो दैनिक जीवन के यथार्थ को देख–परखकर, भोग–सहकर लिखी गयी हैं। इनको अभिलेखों और तत्थों की तरह ट्रीट करने की आवश्यकता है। इनका पाठ अशक्त करने वाले दिवास्वप्नों का चित्र तैयार करने के स्थान पर चलते–फिरते कराहते–तड़पते और उबरने के लिए संघर्ष करते मानवों का साकार पटल खोलता है। अपने आसपास काम करने वालों का दर्द जब लेखक को बेचैन कर देता है तब कूर व्यवस्था को उघाड़ने की बेचैनी ऐसे आस्थान उद्घाटित कर देती है। जो समाज की दिन चर्या का हिस्सा बन गये हैं।"[10]

अम्मा की सास ने उन्हें इस परंपरागत कार्य में धकेला था, मजबूरी वश वे इस कार्य में आई थीं, वे नहीं चाहती थीं, कि उनकी आने वाली पीढ़ी भी इस परंपरा को जारी रखें। इसलिए वे अपने बच्चों को पढ़ाती हैं और इस योग्य बनाती हैं कि वे सम्मान से कहीं नौकरी कर सके। अम्मा इतनी ईमानदार एवं स्वाभिमानी थीं कि अपने बुढ़ापे के सहारे अपने पुत्र को छोड़कर स्वतंत्र रुप में जीवन व्यतीत करना स्वीकारती हैं, क्योंकि उसका बेटा रिश्वत लेकर लोगों का कार्य करवाने का गलत कार्य करने लगता है। अम्मा विचार वात एक स्त्री हैं, इसलिए अपने गुमराह पोते से किसी युवती का विवाह करके उस युवती का जीवन बर्बाद नहीं करना चाहती।

इस प्रकार अम्मा में एक परिश्रमी, ईमानदार, स्वाभिमानी, स्पष्टवक्ता, आदर्श माँ, आदर्श पत्नी एवं दलित स्त्रियों के लिए एक आदर्श एवं प्रेरणा के रुप में हमारे समक्ष आती हैं। अम्मा स्वयं जीवनभर गंदगी, दूर्गंध, कठोर परिश्रम करके अपने परिवार को एक स्वच्छ, सम्मानजनक वातावरण देने का प्रयास करती हैं।

8. राज वाल्मीकि की कहानी **'कान्ति'** की नायिका कान्ति एक उन्नीस वर्षीय युवती है, जो वाल्मीकि समुदाय की स्लम बस्ती में रहती है। बारहवीं का इम्तहान देकर वह अपने समाज के लोगों में शिक्षाद्व विशेषकर महिलाओं को जागरुक करने का प्रयास करती है। गोष्टी में स्त्री–पुरुष समानता के विषय पर ज्वालामुखी सी फूट पडती है और वहाँ मोजूद पुरुषों से कहती है–

"मत करिये आप लोग स्त्री–पुरुष समानता की बातें। आप लोग दोहरे मपदण्ड अपनाते हैं। घर में कुछ और बाहर कुछ और ! महिलाओं के सामने कुछ और उनकी पी पीछे कुछ और ! इस पितृ सत्तात्मक समान में सारे अधिकार परुषों को ही दिये गये हैं। वंचित वर्ग के पुरुषों ने भी स्त्रियों को उनके अधिकारों से वंचित किया है। विडम्बना यह है कि जागरुक नहीं होने के कारण महिलाओं ने भी पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था की कमान अपने हाथों में संभाल रखी है। और इस तरह से अपने पैरों में ही कुल्हाडी मार रही हैं। मैं तो बस्ती की महिलाओं से जाकर कहती हूँ कि पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था की अफीम के नशे ने

बेसुध महिलाओं जागो ! अपनी अस्मिता को पहचानो। शोषण मुक्त समाज बनाओ।"11

वह स्त्रियों को पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था से मुक्त करना चाहती है, ताकि महिलाएँ अपनी अस्मिता को पहचाने एवं शोषण मुक्त जीवन जीएँ। समाज सेवा के अतिरिक्त पेंटिंग एवं लेखन उसका शौक है।

क्रांति अपने ननिहाल में जाकर लोगों को 1993 का एक्ट के अनुसार मैला ढ़ोने की गैरकानूनी प्रथा से मुक्त करवाती है, साथ ही नानी को सीनियर सिटीजन की सरकारी सुविधाएँ उपलब्ध करवाती है। वहाँ की अन्य महिलाओं को पुनर्वास का लाभ दिलवाकर सम्माननीय कार्य से जोड़ती है। क्रांति में अन्याय एवं शोषण के खिलाफ एक आक्रोश देखा जा सकता है। वह संघर्ष से नहीं डरती। बाबा साहब ने जो तीन मूल मंत्र दिए हैं–**"शिक्षित बनो, संगठित रहो, संघर्ष करो"**। यह उसने अपने जीवन में उतार लिया है।

क्रांति के विचार में नयापन है। वह 'दलित' शब्द पर भी आपत्ति करती है। उसका कहना है–

"दलित शब्द का शाब्दिक अर्थ तो आप लोग जानते ही होंगे फिर हम स्वयं को दलित क्यों कहें ? जब हम स्वयं ही दलित कहना पसंद करेंगे तो अन्य लोग तो हमें दलित कहेंगे ही। हम मनुष्य हैं तो हमें मनुष्य के रुप में ही जाना जाए।"12

यहाँ हम देख सकते हैं कि क्रांति के विचारों में हर दलित को उसकी जाति के आधार पर नहीं एक आम मनुष्य के रुप में ही पहचाना जाए। उसे आम मनुष्य से अलग न करके देखा जाए।

क्रांति एक जागरुक लड़की है। हर मुद्दे पर अपनी बेबाक राय रखती है। अन्याय एवं शोषण के खिलाफ उसके मन में आक्रोश की आग है। वह कहती है कि–

"अन्याय एवं शोषण के खिलाफ मेरे मन में एक आक्रोश–एक आग भरी हुई है। जब भी मैं अन्याय–शोषण देखती हूँ तो मेरा खून खौलने लगता है। मुझसे रहा नहीं जाता और मैं बीच में कूद पड़ती हूँ। हालाँकि मुझे परेशानियों का सामना करना पड़ता है। पर मैं हिम्मत हारने वाली नहीं। अभी तो मेरे संघर्ष की शुरुआत है। अभी मुझे बहुत पढ़ना है। अपने समाज के लिए कुछ करना है। अपनी जैसी बहनों को जागरुक करना है। अनपढ़ माँ–बहनों के अंधविश्वास दूर करना है। उनके फिजूल के खर्चें कम कराने है। उन्हें शिक्षा का महत्त्व समझाना है।"13

क्रांति अपने समाज की स्त्रियों को समझाती है कि लड़का–लड़की बराबर हैं। व्यवहार में बेटियाँ बेटों से ज्यादा वफादार साबित होती हैं। वह वंचित समाज को स्वाभिमान के साथ जीना सीखाती है। यही उसके जीवन का लक्ष्य था। वह वंचित समाज के लिए कुछ करना चाहती है। छोटी–सी उम्र में अन्याय–अत्याचार देखने वाली क्रांति की जुबान तीखी हो जाती है, वह किसी को नहीं बख्शती। शराबी पिता दूसरी स्त्री से अवैध संबंध रखता है। लड़ाई–झगड़े करता है और क्रांति एवं उसकी माँ को छोडकर चला जाता है। क्रांति की माँ अकेले ही उसकी परवरिश करती है। बचपन से

ही अभाव, गरीबी, अन्याय, अत्याचार, शोषण आदि देखने वाली क्रांति परिस्थिति वश मायूश नहीं बनती, बल्कि कुछ अच्छी पुस्तकें पढ़कर जागरुक बनती है। अपना मानसिक विकास करती है। साथ ही वाल्मीकि समुदाय के लोगों को जोकि शैक्षिक रुप से पिछड़े हुए थे, उन्हें शिक्षित बनाने का प्रयास करती है।

क्रांति के पात्र में हमें दलित चेतना लानेवाली क्रांति दिखाई देती है। स्वतंत्रता, समता, लैंगिक समानता, बंधुता, आत्मसम्मान का पाठ दलितों को पढ़ाने वाली क्रांति वाल्मीकि समाज के जीवन से अज्ञानता का अंधकार दूर करके ज्ञान का प्रकाश फैलाने का संकल्प करती है। क्रांति आधुनिक युग की दलित युवती है, जिसमें दलित चेतना एवं नारी शक्ति दोनों गुणों का समान रुप से देखा जा सकता है। आज दलित समाज में आवश्यकता है, क्रांति जैसी युवतियों की, जो स्वयं शिक्षित होकर अपने परिवार एवं समाज को भी जागृत करने का भरसक प्रयास करें। क्रांति की यही विशेषता बहुत कम दलित नारी पात्रों में दिखाई हैं।

9. अमर स्नेह की **'सनातनी'** कहानी की चन्द्रो एक सफाई कर्मचारी है। चन्द्रो स्वयं शिक्षित नहीं है, किन्तु अपने एक मात्र पुत्र अनुआ को शिक्षित बनाना चाहती है। अनुआ प्रथम गुरु अपनी माँ से सत्य–असत्य, पाप–पुण्य, सही–गलत आदि का ज्ञान प्राप्त करता है। अपने पुत्र की शिक्षा पाने की तीव्र लालसा चन्द्रो के हृदय को बार–बार झकझोरती है। गाँव में दलितों से की जाने वाली परंपरागत अस्पृश्यता, अपमान, छुआछूत, दलितों को हीन समझने की प्रथा, उन्हें शिक्षा से सदैव वंचित रखने की कुटील वृत्ति, चन्द्रो जैसी दलित विधवा स्त्री के लिए बहुत बड़ी चुनौती थी। दूसरी ओर अनुआ पाठशाला की खिड़की में से छिपकर शिक्षा प्राप्त करने में सफलता पाता है। कलयुग के एकलव्य की तरह अनुआ एक प्रतिभाशाली शिष्य बनता है। चन्द्रो की दी हुई शिक्षा अनुआ के लिए जीवनपयोगी मूल मंत्र बन जाता है। चन्द्रो के इन्हीं गुणों के कारण पाठशाला के पण्डितजी जो जीवनभर जातिगत भेदभाव को लेकर चले थे, उनका हृदय परिवर्तित हो जाता है। उन्हें आत्मग्लानि होने लगती है, उन्हें सत्य का परिचय हो जाता है। लेखक के शब्दों में

> **"जो पण्डित जी चन्द्रो के जाने पर हमेशा गंगाजल से पूरी पाठशाला और दिशाएँ शुद्ध किया करते थे। अचानक उन्होंने गंगाजल भरा लोटा जो उनके हाथ में था, अपने सर पर उड़ेल लिया।"**[14]

यहाँ चन्द्रो अपने विशेष गुणों से कलयुग के द्रोणाचार्य अर्थात् गुरु पण्ड़ितजी को सत्य से अवगत कराती है। चन्द्रो के अपमान, यातनाओं, शोषण एवं अमानवीय आचरण के लिए पण्डितजी स्वयं उससे क्षमा माँगते हैं एवं पश्चाताप की अग्नि में जलने लगते हैं। चन्द्रो की सच्ची लगन उसके पुत्र को उसके लक्ष्य तक पहुँचाती है, साथ ही समाज से अस्पृश्यता की समस्या को खत्म करने की पहल भी उसी के कारण संभव हो पाती है।

10. उमेश कुमार सिंह की **'रम्पो का चेहरा'** की नायिका रम्पो अपने पति भोला एवं दो बच्चों के साथ अत्यंत गरीबी में गुजर कर रही थी। ससुर सुखराम की मृत्यु के बाद दलित समाज के लोग भोला को गरीबी का एकमात्र सहारा उसकी तीन बीघा जमीन बेचकर पिता की तेरहवीं करने के लिए विवश करते हैं। भोला और रम्पो एक ओर

सवर्ण समाज के लोगों का अत्याचार सहते हैं, दूसरी ओर उन्हें अपने ही समाज के लोगों द्वारा दाने–दाने का मोहताज बनाने पर विवश किया जाता हैं। भोला दलित समाज के लोगों के समक्ष हुक्का पानी बंद होने के सामाजिक बहिष्कार से डर जाता है। रम्पो के विचार भोला से विपरीत हैं। वह पंच परमेश्वर के ऐसे निर्णय का सख्त विरोध करती है, जो उन्हें जीते जी मार डालेगा। वह समझती है कि मरने वाला कभी लौटकर नहीं आता, किन्तु उसके पीछे जीवित भी अपने आप को मौत के मुँह में ढकेल दें यह कतई उचित नहीं कहा जा सकता। वह अपने पति को समझाते हुए कहती है–

> **"देखो जी, पंच परमेश्वर के बराबर होते हैं। तो उन्हें भी न्याय की बातें करना शोभा देती हैं। परन्तु इन पंचों ने तो आंखों पर पट्टी बांध रखी है। हमें दर–दर के भिखारी बनाने पर तुले हुए हैं। मैं ऐसे पंचों के फैसले पर थूकती हूँ। ये कहते हैं कि तेरहवी करके कक्का राख में ही पड़े रहेंगे सब मूर्खों की सी बातें हैं। इन्हें खाना–पीना ही दीखता है। एक दिन मुंह चिपड़ने के लिए ज़िंदगी भर हमारे मुँह पर मुछका बांधने पर तुले हुए हैं। तुम तो मर्द होकर भी बस हुक्का पानी बंद करने से ही घबरा रहे हो। मैं इन पंचों के फैसले के खिलाफ विद्रोह का डंका बजाकर रहूँगी। मैं तुमसे भी कहे देती हूँ, तेरहवीं करने का नाम भी मत लेना। नहीं तो मैं कुएँ में कूदकर मर जाऊँगी।"**[15]

यहाँ दलित समाज के स्वार्थी परंपरावादी लोगों से रम्पो विद्रोह करने को तैयार रहती है। पुरुष प्रधान समांज में पति के निर्णय को ही अंतिम निर्णय माना जाता है। रम्पो इसका भी विरोध करते हुए कहती है–

> **"घर का हर फैसला करने का हक़ तो मर्दों का है। चाहे घर लुटा दें। मरद ग़लत होते हुए भी सही। औरतों का सही निर्णय भी ग़लत।"**[16]

यहाँ रम्पो पति के गलत निर्णय को भी चुनौती देती है। रम्पो अपने पति को मार्ग से भटकने नहीं देती एवं सच्ची सहधर्मिणी होने के कर्त्तव्य को निभाती है। रम्पो ऐसा करके अपने ही समाज द्वारा होने वाले अन्याय एवं परंपरावादी मान्यताओं के लिए अपने परिवार को बली का बकरा बनने से बचा लेती है। रम्पो का विद्रोह आज की दलित नारी में आने वाली चेतना को उजागर करता है। दलित महिलाओं की इसी चेतना के विषय में दीप्ति प्रिया महरोत्रा का कहना है–

> **"जब समाज में, रोजमर्रा की जिन्दगी में, पीड़ा व प्रताड़ना फैलती चली जाती है, तब महिलाएँ भड़क उठती हैं। दमन करने वालों के खिलाफ महिलाएँ अपनी आवाज सदा उठाती रही हैं, चाहे वो विदेशी शासक हों या स्थानीय जमींदार घरेलू जिन्दगी में असमानता और अन्याय झेलती हुई महिलाएँ आखिरकार अपने परिवार के रुढ़िगत ढाँचों, नियमों और पाबन्दियों पर भी नज़र डालने लगती हैं।"**[17]

रम्पो ने सामाजिक न्याय और सामाजिक परिवर्तन के लिए कमर कसी है। सामाजिक परिवर्तन करने की पहल कोई दूसरा करेगा, रम्पो यह सोचकर बैठी रहती, तो वह साधरण दलित नारी कही जाती, किन्तु वह किसी दूसरे का इतज़ार न

करके स्वयं ही न्याय पाने के लिए निडर बनकर आगे बढ़ती है, यही उसकी विशेषता कही जाएगी।

2. गुजराती की दलित कहानियों में विशेष नारी पात्र

1. मोहन परमार द्वारा रचित **'थडी'** कहानी में दलित रेवती का जातीय शोषण गाँव का सवर्ण मानसिंह करता है। रेवी इस अत्याचार को छः वर्षों तक सहती है, उसे डर था, कि यदि उसने प्रतिकार किया तो उसके परिवार को मानसिंह कष्ट पहुँचा सकता है। मानसिंह के पाप का घड़ा भर जाने पर रेवी की सहनशक्ति खत्म हो जाती है। अपने पति, बच्चे और जेठ–जेठानी से मिलने वाले प्रेम एवं सम्मान को बनाए रखने एवं अपने आप को मानसिंह से हमेशा के लिए मुक्त होने की कामना से रेवी में नई शक्ति का संचार होता है। रेवी अपने भीतर की नारी शक्ति को पहचान जाती है और निर्णय लेती है कि वह स्वयं को और अपने परिवार को इस प्रकार घुट–घुटकर जीने से मुक्त कराएगी। अपने वैवाहिक सुखद जीवन को बचाने एवं बनाए रखने के लिए रेवी एक ऐसी युक्ति का प्रयोग करती है जिससे साँप भी मर जाए और लाठी भी न टूटे।

रेवी मानसिंह से कहती है कि मैं हमेशा के लिए तुम्हारे घर में आना चाहती हूँ और जो सम्मान एवं अधिकार तुम्हारे घर की औरतों को मिलता है, वह मुझे भी मिलना चाहिए। तुमसे विवाह करके तुम्हारे घर के कुँए से पानी भरना, तुम्हारे घर में रहना आदि के बिना हमारा संबंध पूर्ण नहीं हो सकता।

रेवी में पहले जातिगत एवं स्त्री सुलभ भय अवश्य था, कि उसके और मानसिंह के अनैतिक संबंध की बात से उसका परिवार बिखर जाएगा और समाज में उसकी निंदा होगी। दूसरी ओर रेवी की इसी आर्थिक कमजोरी, जातिगत कमजोरी का भरपूर लाभ सवर्ण मानसिंह उठाता है। यह समस्या मात्र रेवी की ही नहीं कई दलित महिलाओं की है। किन्तु रेवी जातीय शोषण के जिस दलदल में धँसी थी उसमें में हमेशा के लिए बाहर आने का मार्ग वह स्वयं ही निकालती है। दलित नारी का शोषण के प्रति विद्रोह की यह नई सोच रेवी के पात्र का पाठकों की स्मृति में सदैव विशेष बनाए रखेगी।

रेवी के जातीय शोषण के मूल में तो वर्णव्यवस्था ही है। रेवी बहुत ही चतुराई से मानसिंह से छुटकारा पाने के लिए इसी वर्णवयवस्था का ब्रह्मास्त्र उस पर छोड़ती है, जिससे मानसिंह पराजित हो जाता है। रेवी को मिलने वाली मुक्ति उसके अपने मस्तिष्क एवं बुद्धी चातुर्य का परिणाम कहा जा सकता है। रेवी उन दलित महिलाओं के लिए मुक्ति का एक मार्ग खोलती है, जिसे अब तक कोई दलित महिला नहीं खोज पाई थी। रेवी इन्हीं गुणों के कारण विशेष दलित नारी पात्र कही जा सकती है।

2. हरिपार की **'सोमली'** की नायिका सोमली गाँव के सरपंच द्वारा होने वाले जातीय शोषण के समक्ष विवश एवं लाचार थी। उस समय उसकी रक्षा करने के लिए घर में न तो पति होता था और नहीं ही कोई और ही। जिस अन्याय एवं शोषण को वर्षों पहले वह सहती है, अपनी पुत्रवधू को वह उससे बचाती है। सरपंच की कुदृष्टि का भोग बनने से वह अपनी पुत्रवधू को स्वयं बचाने का साहस करती है। सोमली गंड़ासा से सरपंच की हत्या कर देती है। यहाँ सोमली का एक शक्तिशाली स्त्री रुप में चित्रण हुआ

है। न्यायाधीश द्वारा सोमली के पक्ष में फैसला सुनाना न्यायतंत्र की जीत है। गरीब सोमली को बचाकर न्यायतंत्र का तराजू संतुलित रखा है।

सोमली उन दलित महिलाओं का प्रतिनिधित्व करती है जो सवर्ण पुरुषों के जातीय शोषण को परंपरागत रुप से सहती आई हैं। दलितों के उस समाज में स्त्रियों के जातीय शोषण के प्रति किसी पुरुष द्वारा विद्रोह नहीं किया जाता, बल्कि इस शोषण को सहने की उनकी परंपरा रही है। सोमली को अफसोस था कि यदि उसे बचानेवाला कोई होता तो उसे यह शोषण नहीं सहना पड़ता। इसलिए वह निर्णय लेती है िकइस परंपरागत जातीय शोषण का भोग वह अपनी बहू को नहीं बनने देगी चाहे उसे इसके लिए स्वयं मरना पड़े या दूसरे को मारना पड़े, वह अब पीछे नहीं हटेगी।

यहाँ सोमली पुरानी पीढ़ी की दलित स्त्री के रुप में प्रस्तुत हुई है और उसकी पुत्रवधू नई पीढ़ी की दलित स्त्री। उस समाज में सवर्णों द्वारा दलित स्त्रियों का जातीय शोषण होना बड़ी बात नहीं थी, किन्तु दलित स्त्री इस परंपरागत शोषण के प्रति विद्रोह और अत्याचार के समक्ष प्रतिकार सोमली जैसी दलित स्त्री की विशेषता है।

3. बी. केशरशिवम् की **'राजीनामा'** कहानी की सीमा एक शिक्षित युवती है, जो कॉलेज में लेक्चरर है। अपने परिश्रम एवं योग्यता के बल पर वह इस मुकाम तक पहुँचती है। दलित होने के कारण उसके सवर्ण लेक्चरर से उसके प्रणय संबंध पर कॉलेज के आचार्य, स्टाफ विद्यार्थियों एवं अन्य सभी को एतराज होता है। यहाँ सीमा से जबरन राजीनामा अर्थात् त्यागपत्र माँगा जाता है। अपने परिवार के भरण–पोषण का एकमात्र सहारा सीमा चाहकर भी अपनी नौकरी नहीं छोड़ सकती। अपने ही कॉलेज के लोगों द्वारा उसका बार–बार अपमान किया जाता है, फिर भी सीमा अपने अधिकार के लिए लडती है, समाज या लोकलाज के डर से कमजोर नहीं पड़ती। आचार्य एवं स्टाफ की भूख हड़ताल के कारण वह त्यागपत्र दे देती है।

सीमा अपने परविार का भरण पोषण करके घर के बेटे की जिम्मेदारी पूरी करती है। अपने परिवार के लिए वह नकारात्मक वातावरण में भी नौकरी करने पर विवश है। जातिगत विवशता, उसकी नौकरी मिलने में दिक्कतें आती हैं। सीमा इन सारी समस्याओं के बावजूद अपनी शिक्षाद्व आत्मविश्वास, स्वाभिमान के बल पर वर्षों संघर्ष करती है। और उस स्थान पर पहुँचती है, जहाँ उसका खोया हुआ सम्मान उसे मिल जाता है। यह कठिनाई के बाद मिलने वाली सफलता उसके एवं उसकी तरह की अन्य दलित युवतियाँ के लिए प्रेरणा बन जाती है।

यहाँ सीमा एक शिक्षित दलित युवती होने के कारण अत्याचार एवं अन्याय के समक्ष अडिग रहकर उसका सामना करती है। अपनी योग्यता एवं न्याय के बल पर उसी कॉलेज में कुछ वर्षों बाद आचार्य बनकर उसकी वापसी होती है। यहाँ सीमा की न्याय पाने की लड़ाई कई वर्षों तक चलती है किन्तु जीत उसे ही मिलती है। सीमा का दृढ़ मनोबल, आत्मविश्वास, परिश्रम, लगन, साहस, स्पष्टवादी स्वभाव, स्वाभिमानी, आत्मसम्मान के लिए उसकी लड़ाई उसे और अधिक मजबूती और शक्ति प्रदान करती है। आधुनिक शिक्षित दलित युवतियों के लिए सीमा का पात्र एक आदर्श पात्र कहा जा सकता है।

4. बी.केशरशिवम् की **'मंकोड़ा'** कहानी की संतोक दलित चेतना की ज्वलंत दलित नारी पात्रों में से एक है। संतोक गाँव के सवर्ण रणछोड़ की कामुक वृत्ति का शिकार नहीं बनना चाहती थी। गाँव की अन्य दलित स्त्रियों का जातीय शोषण होते एवं

उनकी हत्या की बात सभी जानते थे, किन्तु इस अन्याय के समक्ष सभी दलित चुप्पी साधे बैठे थे। संतोक उनमें से विशेष थी, क्योंकि वह अन्य स्त्रियों की भाँति रणछोड़ की वासना का शिकार नहीं बनना चाहती थी। उसका पति गाभा इतना साहसी, निडर या शक्तिशाली नहीं था, कि गाँव के धनाढ्य, सबल एवं कामुक व्यक्ति से अपनी पत्नी की रक्षा कर सके। पति की कमजोरी एवं लाचारी संतोक जानती है, फिर भी वह स्वयं को कमजोर नहीं पड़ने देती। कामांध बने रणछोड़ को उसका पुरुषत्त्व काटकर संतोक ऐसा दंड देती है, कि वह किसी दूसरी स्त्री का जातीय शोषण न कर सके।

संतोक अपने गाँव की दलित स्त्रियों के जातीय शोषण की प्रथा को तोड़ने का साहस करती है। लीक से हटकर वह नारी स्वतंत्रता का नया मार्ग बनाती है। उसका रास्ता सही न होते हुए भी, परिस्थितिवश लिया हुआ निर्णय है। यहाँ दलित पुरुष से भी अधिक शक्ति दलित स्त्री में लेखक ने दिखाई है।

5. हरीश मंगलम् की **'दायण'** कहानी की बेनीमां एक अनुभवी दाई के रुप में हमारे समक्ष आती है। गाँव की दलित बुजुर्ग बेनीमां ने अपने दाई के कुशल गुणों से अपने जीवनकाल में प्रसव वेदना पीडित स्त्रियों को मृत्यु के मुख से बचाया था, साथ ही कितने ही बच्चों को जीवनदान दिया था। बेनीमां अपनी इस सेवा के बदले में मात्र एक नारियल की अपेक्षा रखती थीं। बेनीमां ने दलित एवं सवर्ण सभी स्त्रियों की निःस्वार्थ सेवा की थी। बीस वर्षों से दलितवास में एकाकी जीवन जीने वाली बेनीमां लोगों की इसी सेवा के कारण आदरणीय समझी जाती थीं। हालाँकि सवर्ण भी अपने स्वार्थ एवं संकट के समय बेनीमां की सेवा लेते आए थे, किन्तु स्वार्थ सिद्ध हो जाने पर वे बेनीमां की अवहेलना भी करते थे।

बेनी की उदारता और सहन शक्ति उनके चरित्र की विशषताएँ हैं। वर्षों तक सवर्ण समाज को वे दाई की सेवा देती हैं, सभी को सम्मान देती हैं, किन्तु बाद में जिन सवर्ण बच्चों को एवं स्त्रियों को उन्होंने जीवनदान दिया था, वही उनका अस्पृश्य कहकर अपमान करते हैं। उस समय बेनी माँ की सहन शक्ति की परीक्षा होती है, किन्तु परोपकारी मनुष्य बेनी माँ की तरह काँटों के बदले में फूल ही बिचेरता है। बेनी माँ इस परोपकारी स्वभाव के कारण वह दलित महिलाओं एवं समाज में आदरणीय एवं आदर्श बन जाती है। बेनी माँ सभी को यह सिखा देती हैं कि सबसे बड़ा धर्म मानवता का है, जिसकी कोई जाति नहीं होतीद्व जो अस्पृश्यता, स्वार्थ के बंधन से सदैव मुक्त होता है। यह शुद्ध विचार बेनी माँ को पाठक के ह्रदय में विशेष एवं स्मरणीय बनाते हैं।

बेनी अत्यंत ही सहनशील, उदार, दयालु, स्वाभामानी, परिश्रमी, गंभीर एवं कुशल दाई होने के कारण विशेष दलित नारी पात्रों में हमारे समक्ष आती हैं। क्योंकि वर्षों से सवर्णो की सेवा के बदले में अपमान मिलने पर भी वे अपने स्वभाव एवं कर्त्तव्य को पूर्ण करने के सकारात्मक विचारों को नहीं छोडती। सवर्णों पर किए गए उपकार के बदले में अपकार मिलने पर उन्हें ठेस अवश्य पहुँचती है, किन्तु उस ठेस की पीड़ा से उठनेवाली आह उनके मुँह से नहीं निकल पाती। इतनी सहनशक्ति बेनीमां के पात्र को विशेष बनाती है।

6. बी. केशरशिवम् की कहानी **'राती रायण की रताश'** की केशली का सौन्दर्य परी से भी अधिक था। उसके अनुपम सौन्दर्य को देखकर गाँव के सवर्ण युवक दीपा की कुदृष्टि केशली पर रहती है। केशली बाह्य रुप में जितनी कोमल, सुंदर एवं आकर्षक थी, वही शेरनी की तरह दहाड़ मारकर अपने शत्रु अर्थात् उस पर बुरी दृष्टि डालने वाले

या अपशब्द कहने वाले दीपा को छठी का दूध याद दिला देती है। हर स्त्री में आत्मसम्मान की भावना तो होती है, किन्तु अपने आत्मसम्मान या अपने स्वाभिमान पर कीचड़ उछालने वालों के समक्ष प्रतिकार हर स्त्री के वश की बात नहीं होती। केशली अपमान सहकर चुपचाप नहीं रहती। वह दीपा के गिड़गिड़ाने पर भी उसे माफ नहीं करती, यहाँ तक कि दीपा उसके पैरों में पड़कर माफी माँगता है, डर से काँपने लगता है, किन्तु केशली उसे नहीं बख्शती।

यहाँ केशली का चरित्र लोक–लाज के डर से अन्याय सहकर खामोश होने वाला नहीं, बल्कि ईंट का जवाब पत्थर से देने वाली है। हर सुंदर दिखने वाली स्त्री अबला नहीं होती, वह केशली की तरह सबला नारी शक्ति का प्रतीक भी हो सकती है। सवर्ण दीपा के अपमानजनक शब्द पर जी भरकर गंदी गालियाँ देनेवाली केशली, दीपा को इतना भयभीत कर देती है, कि वह जीवन में किसी भी स्त्री के समक्ष कुदृष्टि तो क्या दृष्टि डालने से पहले चार बार सोचेगा। यहाँ दलित स्त्री के आक्रोश को लेखक ने नए रुप में चित्रित किया है। केशली का चरित्र अपने इन्हीं गुणों के कारण विशेष है।

<u>7.</u> विट्ठलराय श्रीमाली की **'सांकड़ा'** कहानी की लाली अपने रोगीष्ठ पति शनिया के जीवन में खुशियों की बहार ले आती है। लाली जितनी खुबसूरत थी, उतनी ही परिश्रमी, बुद्धीशाली एवं पतिव्रता नारी भी। घर का काम, खेतों का काम, पति की देखभाल, बच्चों की परवरिश आदि की जिम्मेदारी उसने अपने कंधों पर सहर्ष स्वीकार ली थी। अपने पति को ही अपना श्रृंगार समझने वाली लाली रोगीष्ठ, बलहीन शनिया को उतना ही सम्मान प्रेम एवं महत्त्व देती है, जितना की आम स्त्री अपने स्वस्थ, बलवान पति को देती हैं। उसकी दृष्टि में उसका पति एवं परिवार ही उसका सब कुछ था।

लाली वे सारे काम करती थी, जो आम तौर पर उस गाँव के पुरुष करते थे। जैसे बैलगाड़ी चलाना, अपने परिवार की देखभाल करना, खेतों की देखभाल करना आदि। गाँव के सरपंच भी लाली की तारीफ में कहते हैं, लाली को परेशान करने वाले भीमला को वह समझाते हुए कहते हैं–

> **"अरे भीमला, तेरे ये धंधे छोड़ दे। किसी दिन जान से हाथ धोना पड़ेगा तू देखता नहीं है कितनी तेज तर्रार बाई है। वह जब ब्याहकर आई तब उसके रुप से सेनमावास तो क्या पूरे गाँव में चर्चा का विषय बना हुआ था। उसका पति शनिया भले ही मरीज था, किन्तु वह घर बसाकर रही। उसने आकर शनिया के दुःख दूर कर दिए। नहीं तो वह भूखों मर रहा था। लाली ने कठोर परिश्रम करके खेत, घर और शनिया को आबाद किया। आज उसके घर को गाँव में लोग मान देते हैं। पुरुषों को लज्जित करे ऐसी स्त्री को क्या सताना चाहिए ? उसका उदाहरण लेकर हमें शुद्ध विचार रखने चाहिए।"**[18]

यहाँ सरपंच द्वारा लाली के गुणों का बखान किया जाना लाली की विशेषता का परिचय देता है। लाली सर्वगुण सम्पन्न नारी थी। सौन्दर्य एवं गुणों के साथ ही वह अपने पर बूरी दृष्टि रखने वाले भीमला की पीठ पर सांकड़ा (मोटी पैजेनी) से ऐसे वार करती है कि उसकी पीठ की हड्डी टूट जाती है। लाली शोषण सहकर गाँव की अन्य दलित स्त्रियों की तरह चुप नहीं रह सकती। वह तो दोषी को स्वयं दंड देती है।

स्त्री का गहना सांकड़ा उसके शरीर की सुंदरता बढ़ाता है, किन्तु यहाँ लाली अपने सांकडा का उपयोग आत्मरक्षा के हितार्थ करती है।

8. विट्ठलराय श्रीमाली की कहानी **'शैली का व्रत'** की शैली सोलह वर्ष की दलित लड़की है। अपनी सवर्ण सहेलियों के साथ वह भी जया पार्वती का व्रत करती है। अपने माता–पिता की एकमात्र कन्या शैली सुंदर होने के साथ–साथ परिश्रमी एवं होनहार विद्यार्थीनी भी थी। उसके माता–पिता उसे उच्च शिक्षा दिलाना चाहते थे। शैली ने भी अपने माता–पिता का सपना पूरा करने का संकल्प लिया था। शैली जिस सोसायटी, स्कूल आदि में रहती थी, वहाँ अस्पृश्यता का सामना उसे नहीं करना पड़ा था, किन्तु जब वह मंदिर में सहेलियों के साथ पूजा की थाली लेकर सबेरे पहुँचती है, तब पुजारी उसे इसलिए रोकते एवं डाँटते हैं, क्योंकि वह दलित थी।

शैली अत्यंत ही स्वाभिमानी कन्या थी। पुजारी द्वारा किए गए अपमान एवं दुर्वव्यवहार को वह सह नहीं पाती। घर एवं समाज में हमेशा प्रेम पाने वाली शैली अपने गुणों से सभी का दिल जीत लेती थी, किन्तु यहाँ मंदिर के पुजारी को शैली के गुण नहीं उसकी जाति ही दिखाई देती है। शैली अपमान की आग में जलने लगती है और काँपने लगती है। वह क्रोधवश पूजा की थाली पुजारी के सिर पर मार देती है और वहॉ से भाग जाती है।

शैली अस्पृश्यता की सदियों पूरानी प्रथा को एक झटके में तोड़ देती है। अपने पुरुषार्थ पर सदा भरोसा रखने वाली शैली जाति से नहीं कर्म से व्यक्ति की पहचान में विश्वास करती है और अपने इसी पुरुषार्थ के बल पर वह एक दिन कलेक्टर के पद पर पहुँचती है।

निष्कर्ष के रुप में कहा जा सकता है कि आज की दलित नारी पहले की तरह अत्याचार सहकर खामोश नहीं रहती, वह तो अन्याय, शोषण, रुढ़िवाद, अस्पृश्यता, परंपरागत जातीय शोषण, पारिवारिक शोषण, लिंग के भेदभाव आदि के समक्ष अपना विरोध प्रदर्शित करती है। पुरुष प्रधान भारतीय समाज में जहाँ नारी अपने अस्तित्व की अपनी अस्मिता की पहचान बनाने में अपनी संपूर्ण शक्ति से पुरुषार्थ करके प्रगति के पथ पर अग्रसर हो रही है, वहॉ दलित नारी भी अपनी क्षमता, शक्ति, आत्मसम्मान, स्वाभिमान, स्वतंत्रता, पहचान, अस्मिता, अधिकार आदि को पाने के लिए पहल कर चुकी हैं, जबकि कुछ नारियाँ अपने लक्ष्य को प्राप्त कर भी चुकी हैं, किंतु अधिकतर नारियाँ आज भी संघर्ष कर रही हैं। सवर्ण नारियों की तुलना में दलित नारियों का जीवन संघर्ष अधिक कष्टमय है, क्योंकि उन्हें पहले स्त्री एवं दलित स्त्री दोनों के कारण दुगना संघर्ष करना पड़ता है। जो दलित स्त्रियॉ आज इस दुगने संघर्ष के बाद भी अपने लक्ष्य को प्राप्त कर रही हैं, वास्तव में वे बधाई पान की हकदार हैं। साथ ही ऐसी दलित नारियाँ अन्य दलित नारियों एवं नई पीढ़ी की दलित युवतियों के लिए आदर्श भी कही जा सकती हैं।

<u>संदर्भ सूची</u>

1. प्रस्तावना – गुजीरतह दलित कहाँनी और सामाजिक सं. राघवजी माधड हयाती सितम्बर–दिसम्बर 2007 पृ. सं 153

2. सिलिया – दलित महिला कथाकारो की चर्चित कहानियाँ सं. डॉ.कुसुम वियोगी पृ. सं. 28

3.

4. युद्धरत आम आदमी पृ. 61

5. मंगली – दलित महिला कथाकरों की चर्चित कहानियाँ सं. डॉ. कुसुम वियोगी पृ.33

6. सुनीता – दलित महिला कथाकरों की चर्चित कहानियाँ सं. डॉ. कुसुम वियोगी पृ.27

7. वही पृ. 60

8. साजिश – दूसरी दुनिया का यथार्थ सं. रमणिका गुप्ता पृ. 85

9. अंगुरी – हैरी कब आएगा सं. सूरजपाल चौहान पृ. 44

10.अम्मा – युद्धरत आम आदमी अक्टूबर–दिसम्बर 2005 पृ. 23

11.कांति – दलित साहित्य वार्षिकी 2007–2008 पृ. 213

12. वही पृ. 213

13. वही पृ. 217

14.सनातनी– बयान जून–2008 पृ. 20

15.रम्पो का चेहरा – हंस अगस्त 2004 पृ. 186

16. वही पृ. 186

17. आलोचना अक्टूबर–दिसम्बर 2004 जनवरी–मार्च 2005 पृ. 143

18.सांकडा – साक्षी साबरनी सं. विट्ठलराय श्रीमाली पृ. 147